

कवि चंद्रकुँवर बर्तवाल के काव्य में पर्यावरणीय चेतना

कु० रेशमा

शोधार्थी, हिन्दी विभाग, बिड़ला परिसर, हे०न०ब० गढ़वाल (केन्द्रीय) विश्वविद्यालय,
श्रीनगर गढ़वाल उत्तराखण्ड

शोध-सारांश

काव्य का उद्देश्य जीवन में आनंद प्रदान करना माना गया है, फिर भी काव्य में युगबोध युगचेतना के भीतर पर्यावरण के संदर्भ भी खड़े होते हैं और इसमें कवि कविता में एक नवीन और सामयिक दृष्टि की अभिव्यंजना करते हैं भले ही पर्यावरण शब्द आधुनिकता को ध्वनित करता है, किंतु वैदिक साहित्य का अध्ययन करने पर हमारे पूर्वजों का प्रकृति व पर्यावरण से अनुराग और गहन सम्बन्धों की झलक प्राप्त होती है। प्रकृति के विभिन्न रूपों को हर युग के कवियों ने अपने साहित्य में चित्रित किया है। आज पर्यावरणविद् विश्व को बचाने के लिए प्रयत्नशील हैं और इस देश के नागरिक ही नहीं अपितु साधु संन्यासियों का समुदाय भी पृथ्वी को सुरक्षा प्रदान करने के लिए कटिबद्ध है। उत्तराखंड का चिपको आन्दोलन, पाणी राखो आंदोलन, नदी बचाओ आंदोलन भी इस बहस का हिस्सा है। पर्यावरणविदों ने हिमालय और गंगा इन दो पर अपनी दृष्टि केन्द्रित की है। हिमालय को महाकवि कालिदास ने विराट रूप में देखा। हिमालय का कालिदास ने जिस सूक्ष्म व रखमयी काव्य रूप में वर्णन किया, उससे संस्कृत साहित्य ही नहीं भारतीय साहित्य व विश्व साहित्य भी सम्पन्न हुआ है। कालिदास विरचित सम्पूर्ण संस्कृत साहित्य में ऐसे विरचित रचनाकार सहस्र वर्षों में एक ही बार होते हैं कालिदास की हिमालयी चेतना की झलक 19वीं सदी के द्वितीय दशक के अंतिम वर्षों में मन्दाकिनी घाटी में जन्मे कवि चन्द्रकुँवर बर्तवाल ने इस चेतना को सम्पन्न किया। आधुनिक छायावादी कवि चन्द्रकुँवर बर्तवाल अपनी डायरी में भी लिखते हैं कि “मेरी कविताओं का आधार हिमालय होगा, हिमालय के दृश्य में अपनी कविताओं में चित्रित करूँगा, मेरे पथ प्रदर्शक कालिदास हैं मुझे किसी का भय नहीं”, सभी छायावादी कवियों ने इस दृष्टि से हिमालय और गंगा का चित्रण किया है। यद्यपि उस समय पर्यावरणीय नारा तो नहीं था, किंतु प्रकृति के वैभव में सृष्टि के रहस्यों का अनुभव करते हुए इन कवियों ने प्राकृतिक सत्यों का भी उद्घोष किया। गंगा एवं हिमालय दोनों को अपने साहित्य का विषय बनाया है। कवि चन्द्रकुँवर बर्तवाल भी इसी काव्यात्मक मुहिम का हिस्सा हैं।

बीज शब्द: युगबोध, युगचेतना, चिपको आन्दोलन, हिमालय, छायावादी चेतना, प्रकृति चेतना, जल, जंगल, जमीन।

मूल आलेख

हमारे चारों ओर की प्रकृति, प्राकृतिक संपदा, हरी भरी पृथ्वी हमारा पर्यावरण है। पर्यावरण के साथ मनुष्य का घनिष्ठ सम्बन्ध है, इसलिये पर्यावरण संरक्षण आज मुख्य चिन्ता का विषय भी है। हमारे प्राचीन युगीन मनीषियों ने अपनी सूझ-बूझ से जीतना उस समय उपलब्ध ज्ञान था उस आधार पर उन्होंने प्राकृतिक संपदा का उपभोग किया साथ ही उसका संरक्षण भी किया। प्राचीन संस्कृति में नदियों को पूजने की परंपरा, वृक्षों को पूजने की परंपरा रही है, लेकिन आज संरक्षण के बजाय पर्यावरण का दोहन अधिक हो रहा है जिससे कि हवा, पानी, नदी, हिमालय लगातार खतरे में हैं। नदियों का पानी सूखता जा रहा है, हिमालय पिघलता जा रहा है जिस कारण यह विमर्श आज मुख्य विषय है।

पूर्व वैदिक मनीषा और जीवन पद्धति में जो सरल, सात्विक लालित्य दिखाई देता है वह प्रकृति की उदारता के प्रति कृतज्ञता की भावना के सौन्दर्य से मंडित है। घनीभूत होकर यही भावना प्रकृति के नाना उपकरणों में

बहुदेववाद की मूर्त कल्पना बनकर अवतरित हुई है। वृक्ष-पूजा इसी प्रतीक पूजा की उद्भावना का एक अंग है। वृक्ष का यह पूजन मानव-मन के विश्वास की धार्मिक प्रदक्षिणा है जिसकी ओर बार-बार लौटकर वह अपनी आस्था को श्रींगारिता करता रहता है। इसलिए काव्य स्वयं वेश-भूषा से सज्जित होकर प्रकृति के कुलावतंस इस वृक्ष की पूजा के लिए अभिप्रेरणा प्रदान करता रहता है।

हिन्दी साहित्य में छायावादी युग से प्रकृति व पर्यावरण को विशिष्ट स्थान मिला है। हिन्दी के आधुनिक काल के साहित्य में पर्यावरण चेतना की समृद्ध परंपरा हमारे साहित्य में रही है, वह आज भी उतनी ही प्रासंगिक है। छायावादी काव्य में प्रकृति का सूक्ष्म और उत्कृष्ट रूप दिखाई देता है। प्रसाद, पंत, निराला, महादेवी वर्मा में पर्यावरण यत्र-तत्र पाया जाता है। पंत को तो प्रकृति का सुकुमार कवि भी कहा गया है। पंत की यह पंक्तियाँ देखने योग्य हैं-

“छोड़ द्रुमों की मृदु छाया
तोड़ प्रकृति से भी माया
बाले तेरे बाल जाल में
कैसे उलझा दूँ लोचन”¹

प्रसाद की कामायनी का पहला ही पद पर्यावरण का उत्कृष्ट उदाहरण है। प्रसाद ने मानो प्रकृति ही सौंदर्य और सौंदर्य को ही प्रकृति माना है।

“हिमगिरी के उत्तुंग शिखर पर
बैठ शीला की शीतल छांह
एक पुरुष भीगे नयनों से
देख रहा था प्रलय प्रवाह”²

कालिदास ने भारत की भौगोलिक सीमा का विस्तार देते हुए मानों इस देश की महिमा का ही बखान किया है। हिमालय को पृथ्वी के मानदण्ड के रूप में वर्णित किया है।

“अस्त्युतरस्यां दिशि देवतात्मा
हिमालयो नाम नगाधिराजः
पूर्वापरो तोय निधिवगाऽयं
स्थितः पृथिव्याम् इव मानदण्डः।”³

कालिदास को चन्द्रकुँवर ने अपनी कविताओं का आधार माना है, चन्द्रकुँवर ने छायावाद व छायावादोत्तर काव्य के भीतर हिमालय को मानदण्ड के रूप में कालिदास की भाँति वर्णित किये जाने को लेकर गढ़वाल का कालिदास कहा जाता है। कवि स्वयं लिखते हैं -

“ओ कालिदास! यदि तुम मेरे साथ न होते
तो जाने क्या होता।

तुमने आंखे दी मुझको

मैं देखता था प्रकृति को।

हृदय से प्रेम करता था उसे

पर मेरा सुख मेरे भीतर कुम्हला जाता था।”⁴

चन्द्रकुँवर की पर्यावरणीय चेतना का आधार हिमालय रहा है। उत्तराखण्ड हिमालयी राज्य है, इसलिए स्वाभाविक भी है कि चन्द्रकुँवर ने हिमालय पर्वत बचपन से देखे जिस कारण उनके साहित्य में हिमालय का जीवंत चित्रण हुआ है। यह चित्रण कभी स्वतंत्र रूप में आया है और कभी अनेक भावों से युक्त होकर। हिमालय की चोटियाँ बर्फ से ढक जाती हैं 'रजत चोटियाँ' नामक कविता में वे लिखते हैं -

“लगी दिखने आज हिमालय की रजत चोटियाँ बादलए

आज देखते ही रह गए बर्फ से भरी घाटियाँ।”⁵

चन्द्रकुँवर बर्तुल भी हिमालय, हिमनदों और पर्वतीय प्रदेश की मनोहर प्रकृति से जीवन रस लेकर अपने काव्य का सृजन करते हैं। कवि ने अपना जीवन पर्वत शिखरों की छाया में व्यतीत किया और कहा-

“मैंने जीवन भर पर्वत ही पर्वत देखे,

दुर्गम बर्फानी उजाड़ हिमधाम सरीखे

उठते गिरते पथ का ही क्रम मैंने जाना

हिमशिखरों को नयनों ने सीखा अपनाना

गंगा गिरती है मेरे हिमगिरि के शिखरों पर

मैंने जीवन भर पर्वत ही पर्वत देखे।”⁶

कवि चन्द्रकुँवर ने पर्यावरणीय प्रकृति में ऋतुओं के भव्य चित्रण किये हैं और कहा कि जिन्हें मैदान प्यारे हों वे वहीं रहें किन्तु मुझे तो बर्फ से भरे पहाड़ ही प्यारे हैं-

“प्यारे समुद्र मैदान जिन्हें नित रहें उन्हें वे ही प्यारे,

मुझको तो हिम से भरे हुए अपने पहाड़ ही प्यारे हैं।”⁷

जिस तरह से सुंदर चित्र कवि ने हिमालयी प्रकृति के खींचे हैं, उनका अन्वेषण करने के लिए आज पर्यावरणविद् जागरूक जान पड़ता है। विश्व की भौगोलिक संरचना में ऐसे मनोहर चित्र एवं सौन्दर्य दुर्लभ हैं जो गढ़वाल हिमालय को प्राप्त हैं, यही कारण है कि आज हिमालयी राज्यों पर अलग नीति बनाने की मुहिम जारी है।

‘काफल पाकू’ नामक कविता के माध्यम से कवि ने पर्यावरणीय संकेत दिये हैं, जिसमें उन्होंने प्रश्न किये हैं कि ‘तुम्हारी गूँज अब क्यों नहीं सुनाई देती? कहीं ऐसा तो नहीं उस वन में आग लग गई हो अथवा वे शैल नष्ट हो गये हों जिनमें तुम गाते थे अथवा वे वृक्ष और वह प्रकृति धूमिल हो गई हो जो तुम्हें गीत गाने पर विवश कर देती थी। मैं तो विवश रहा, जन्मभूमि से दूर हूँ पर यहां तुम्हारा स्वर कैसे सुनाई दे रहा है? ‘काफल पाकू’ जैसी ध्वनियों को कवि ने पर्यावरणीय चेतना से जोड़कर प्रश्न किया है? कि-

“मैं तो विवश यहां आया हूं पर यह कैसे आया?

क्या मुझको मेरी जननी का संदेश कुछ लाया?

मुझसे कहने को आज रात

आया जो यह आशा प्रभात?

अथवा क्या वे शैल बह गए जिन पर था यह गाता

उखड़ गए वे पादप जो थे इसके आश्रयदाता

क्या उस वन में लग गई आग?

आया जो यह निज विपिन त्याग?

हिम पर्वत का क्या सब तुषार?

बन गया सलिल की तरह धार?

रह गए शेष नंगे पहाड़

हिम दीन-हीन-सूखे-उजाड़?

बच पाया क्या कोई न भाग?

आया यह हिम शैल त्याग?⁸

कवि पंत प्रातः काल में चहकती चिड़िया की चहक से खिल उठते हैं। फुदक-फुदक वह चिड़ियां प्रातःकाल से ही हमारे घर आँगन में चहक उठती है, सुबह सूर्य उदय होने से पहले ही यह नहीं चिड़ियाँ जाग उठती है।

प्रथम सूर्य की किरण जब धरती पर पड़ती है तब चिड़ियाँ का मधुर गान भी नवजीवन का संचार करता है, धरती नई आशा-उम्मीदों से आनंदित हो उठती है-

“प्रथम रश्मि का आना रंगिणि

तूने कैसे पहचाना?

कहाँ कहाँ हे बाल विहंगिनि

पाया तूने यह गाना

सोयी थी तू स्वप्न नीड में,

पंखों के सुख में छिपकर।”⁹

यह बाल विहंगिनि मानो चन्द्रकुँवर की पहाड़ी चिड़िया “काफल पाकू” की भाँति कवि को जगाती है। जहाँ एक ओर कवि बर्त्वाल पर्यावरणीय प्रश्न खड़े कर रहे हैं कि क्या वे शैल बह गये, या वे पेड़ कट गये जो तुम्हारे आश्रयदाता थे इसलिए तुम इस प्रदेश में मुझे जगाने आई हो, वहीं पंत प्रथम रश्मि से पहले छोटी चिड़िया से

प्रश्न पूछते हैं कि सूर्य से जल्दी उठना तुमने कहाँ से सीखा? बंसत तो कवि को अत्यंत प्रिय है, गीतों की धारा की तरह कवि के हृदय कुंज में लहर सी उठती है-

“अब छाया में गुंजन होगा

वन में फूल खिलेंगे,

दिशा-दिशा से अब सौरभ के

धूमिल मेघ उड़ेंगे।”¹⁰

इसी तरह कवि ने शिशिर, हेमन्त आदि ऋतुओं का वर्णन मनुष्य जीवन के संग में रहकर किया है और इनके मध्य हिमालय के अनेकानेक रूप खींचे हैं। कहा जा सकता है कि छायावादी कवियों की भांति कवि बर्त्वाल भी प्रकृति के निकट रहकर उससे रस ग्रहण करते रहे और जब कभी उन्हें प्रकृति में उद्वेलन या विक्षोभ दिखाई दिया तो वे चिंतित भी दिखाई दिए। प्रकृति के प्रति उनकी सहानुभूति रागात्मकता और चिंता का स्वर एक प्रकार से पर्यावरणीय दृष्टि के ही पर्याय कहे जा सकते हैं।

चन्द्रकुँवर की पर्यावरणीय चेतना का आधार हिमालय की तरह मन्दाकिनी भी है। मन्दाकिनी निश्छल बहने वाली सदाना नदी है। मन्दाकिनी कवि के काव्य लिखने की प्रेरणा भी है। चन्द्रकुँवर के काव्य का प्रस्फुटन गढ़वाल के सुरम्य क्षेत्र पंवालिया ने किया था, जो कि प्राकृतिक सौंदर्य से सुसज्जित है। मन्दाकिनी घाटी का प्राकृतिक सौंदर्य उनके सम्पूर्ण काव्य में झलकता है।

“स्वर्गसरि मन्दाकिनी हे

स्वर्गसरि मन्दाकिनी

मुझको डुबा निजकाव्य में

स्वर्गसरि मन्दाकिनी”¹¹

कवि की रचनाओं में निश्छल निरंतर बहती नदियाँ हैं, जो उनकी काव्य लिखने की प्रेरणा हैं नदी की निरंतरता जीवन की निरंतरता है। मानो वह जीवनधारा है आशा, उम्मीदों का डेरा है।

“नदी चली जायेगी यह न कभी ठहरेगी

उठ जायेगी शोभा, रोके यह न रुकेगी।”¹²

नदी जीवन व मृत्यु का बोध है-

“मेरी नदी स्वयं अपने पथ को खोजेगी

वह सूखे पथ को भी फूलों से भर देगी।”¹³

हिमालय से बहने वाली नदियाँ अपने स्रोत से निकलकर सागर में गिरती हैं, उनके मार्ग में कितनी भी बाधा हो पर वह अपने मार्ग को रोकने वाली हर बाधा को पारकर सागर में प्रवेश करती हैं। लेकिन यह कवि जीवन व मृत्यु के बीच झूल रहा है ऐसे में कविता में बिम्ब भी नये प्रयोग हो रहे हैं कवि जीवन की सरिता को संबोधित करते हुए लिखते हैं-

“अपने उद्गम को लौट रही अब बहना छोड़ नदी मेरी

छोटे से अणु में डूब रही जब जीवन की पृथ्वी मेरी”¹⁴

स्रोत का अपने उद्गम, स्रोत की ओर लौटने का एक नया अनोखा बिम्ब है, जहां चन्द्रकुँवर की काव्य की नदियाँ उद्गम की ओर लौट रही हैं या निश्छल बह रहीं हैं, वहीं वे लखनऊ में गोमती को बाँध में बंधा देखकर चिंतित हैं-

बाँध ने रोका उसे बाँहे बढ़ाकर

शान्त चलती गोमती को याद आए गये

बचपन के दिनों के शैल वे

रोकते थे जो उसे बाँहे बढ़ाकर।”¹⁵

वहीं छायावादोत्तर काल के कवि की दृष्टि भी गहरी पर्यावरणीय है, नदियों के साथ अनावश्यक छेड़छाड़ से वह भी चिंतित दिखते हैं। कवि हृदय मनुष्य की भांति नदी को भी संवेदना की दृष्टि से देखता है इसलिये कह उठता है-

“नदीं सोई थी मैंने उसे नहीं जगाया

मैं दबे पाँव वापस आया।”¹⁶

यह प्रगतिवादी दृष्टि चन्द्रकुँवर की भी गहरे बिम्बों से भरी है। उत्तराखण्ड के इतिहास में 2005 में ‘नदी बचाओ आंदोलन’ के दौरान जनकवि गिरिश तिवारी ‘गिर्दा’ ने ‘इस व्योपारी को प्यास बहुत है’ कविता के माध्यम से नदियों पर बने बांधों व ठेकेदार पूँजीपतियों पर तीखा व्यंग्य किया है। वहीं टिहरी बाँध आंदोलन का व्यापक प्रभाव रहा। गीतकार, कवि नरेन्द्र नेगी का गीत ‘टिहरी डूबण लगी च बेटा डामा का खातिर’ चन्द्रकुँवर बर्त्वाल की तरह ‘बाँध पर गोमती’ के माध्यम से नदियों को बाँधने पर गहरा व्यंग्य करते हैं।

1970 के दशक में उत्तराखण्ड के चमोली जनपद में चिपको आंदोलन सबसे बड़ा वृक्षों को बढ़ाने का आंदोलन था, जिसने नये पर्यावरणीय संदर्भ खड़े किये। जल, जंगल, जमीन, हिमालय, गंगा सभी को लेकर कवि, पर्यावरणविद् सतर्क व जागरूक जान पड़ता है। सारी प्रकृति की सेवायें मनुष्य के लिये हैं लेकिन इसका दोहन विनाशकारी है, प्रकृति मनुष्य पर सब कुछ लुटाती है।

गढ़वाल हिमालय के गीतकारों ने अपने गीतों में जड़ और चेतन प्रकृति के दोनों रूपों में गहरा सम्बंध स्थापित किया है, वे पर्यावरण आंदोलन के स्तर को अपने गीतों में उकेरते हैं साथ ही वे पर्यावरण के प्रति भी कृतज्ञ हैं। वे गीत में, गढ़वाल में हुए पर्यावरण विषयक मैती आन्दोलन, चिपको आंदोलन जैसे आंदोलन से प्रेरित होकर वृक्षों के कटान पर विरोध व्यक्त करते हुए लिखते हैं -

“आवा दीदी भुल्यँ आवा

अपडु बण जंगल बचावा, डाल्यँ पर भेटेई जावा

डालि भौ कुछ ह्वे जयां, डालि कटेण न द्यावा हिटा रम्म-झम्म

चला भै ठम्म ठम्म।

मनखूं का बैरयू, बणु का व्यापारयू
वापस लिजा तौ, कुलाड्यों तौ आरयूं
अब नी चलअलू, तुमारू, जुल्मी कानून
अब हम नी होण घोला, डाल्यूं को खून
जंगल हमारा छन
हिटा रम्म-झम्म
चला भै ठम्म-ठम्म”¹⁷

आओ दीदी भुली आओ। अपना जंगल और पर्वत बचाओ आज पेड़ों पर लिपट जाओ। काटने वाले पहले हमें अपनी आरी से काटेंगे फिर पेड़ों को। आज कुछ भी हो जाए पेड़ों को काटने मत देना! चलो! तेजी से चलो। ओ मानवों के बैरियों, जंगलों के व्यापारियों, वापस ले जाओ उन कुल्हाड़ियों और आरियों को। अब तुम्हारा ये जंगल का जंगली कानून नहीं चलेगा। अब हम इस तरह से पेड़ों का खून नहीं होने देंगे। जंगल हमारे हैं और जंगल के हम।

“उसे वृक्ष छाया देते हैं नदियाँ पानी

चिडियां बरसाती उस पर अपनी कोमल वाणी।”¹⁸

आज इसी पर्यावरणीय तत्त्व को बचाने का कार्य भू-वेत्ता, मौसम वैज्ञानिक आदि के द्वारा किया जा रहा है। चन्द्रकुँवर बर्त्वाल हिमालयी संस्कृति के भीतर अपने पर्यावरण के जागरूक प्रहरी हैं।

प्रसिद्ध पर्यावरणविद् अनिल जोशी ने लिखा है- “हमें अपने देश को गैस चेम्बर से बचाने की जरूरत है। हमारे ज्यादातर शहरों में साफ हवा और पानी नदारद है। एक रिपोर्ट बताती है कि दुनियां में 92 शहर पूरी तरह वायु प्रदूषण की चपेट में है।”¹⁹

हिमालय प्रदेश उत्तराखण्ड की भूमि मालकोटी में जन्में कवि बर्त्वाल को आज साहित्य में अप्रतिम योगदान के लिए याद किया जाता है। कवि हिमालय की घाटियों में बसे गांवों में रहें, यहां के लोकजीवन ने उनको अत्यधिक प्रभावित किया। यहां की प्रकृति पर वे मुग्ध रहें जिसने उन्हें काव्य रचना की प्रेरणा दी। कवि चन्द्रकुँवर को प्रकृति ने चेतना का स्वर दिया उसी स्वर से कवि की राष्ट्रीय भावना भी उद्बलित हो उठती है। एक ओर वे असाध्य बीमारी में हैं और दूसरी ओर देश को स्वतंत्र कराने की लड़ाई चल रही थी, तो कवि की कविताएँ भी अपना स्वर मुखर करती है। कवि अपनी कविता में तत्कालीन सामाजिक रूढ़ियों और अंध विश्वासों पर भी तीखा प्रहार करते हैं। कवि की मानवीय चेतना और पर्यावरणीय चेतना अंधविश्वासों पर वहाँ की प्रकृति का प्रभाव स्पष्ट झलकता है जो कि पर्यावरणीय चेतना के नये संदर्भ भी खड़े करते प्रतीत होते हैं।

चिपको आंदोलन की गूंज गढ़वाल क्षेत्र में ही सीमित नहीं रही, अपितु विश्वविख्यात भी हुई। संसार भर के अनेक राष्ट्रों को पर्यावरण के प्रति गंभीर चिंतन हेतु विवश होना पड़ा। चमोली जनपद की महिला ‘गौरादेवी’ सुंदरलाल बहुगुणा एवं चण्डी प्रसाद भट्ट के सफल नेतृत्व में चिपको गांव-गांव गल्ली-मोहल्लों में फैला और आज श्री गौरादेवी चिपको वृत्त के नाम से विश्वविख्यात है। सुंदरलाल बहुगुणा व चिपको आंदोलन के कार्यकर्ताओं ने काश्मीर से कोहिमा तक पैदल यात्रा कर देशवासियों को पर्यावरण के प्रति चिन्तन मनन करने हेतु बाध्य किया और नारा दिया। पर्यावरण चेतना में चिपको आंदोलन के नारों के साथ-साथ स्व० घनश्याम सैलानी जी के गीतों

ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। कारण यह रहा कि पहाड़ी क्षेत्रों में लोकगीत एवं पैदल यात्रा ही पर्यावरण जागरूकता में सहायक सिद्ध हुए। स्व० सैलानी पैदल यात्रा कर गांव-गांव में पर्यावरण गीतों की धुन छेड़ देते, गांव के वृद्ध, युवा, महिलाएं एवं बच्चे उनके गीतों को ध्यान से सुनते और पर्यावरण को संतुलित करने हेतु मानसिक रूप से वृक्षों की सुरक्षा की ओर प्राण प्रण से तैयार होते रहते थे। मनुष्य के लिए की धड़कन व पेड़ के दिलकी धड़कन की तुलना करते हुए गढ़वाली में तब कहते थे “मैं सणी पीड़ा लगदी तब मेरू नाम पेड़ पड़ी” (मुझे पीड़ा होती है इसीलिए मेरा नाम पेड़ पड़ा) इस प्रकार सैलानी जी ने पहाड़ की जनता को वनों के प्रति भावनात्मक रूप में जोड़ने का प्रयास किया। उन्होंने ऐसे गीतों की रचना की जिन्हें आम जनमानस के हृदय पटल को झकझोरकर पहाड़ की महिलाओं एवं नवयुवक युवतियों के मनमस्तिष्क को झकझोरने का प्रयास कहा जा सकता है।

इसी प्रकार सन् 1980 के दशक से गढ़वाल के युवा गीतकार एवं गायक नरेन्द्र सिंह नेगी ने भी अपने पर्यावरण गीतों की छटा से पर्यावरण प्रेमियों में रस का संचार किया, ऐसा नहीं कि कुछ गिने चुने गायक एवं गीतकारों ने पर्यावरण चेतना की अलख में जगाई है बल्कि अनेक साहित्यकारों ने समय-समय पर अपने साहित्य सृजन के माध्यम से जनमानस में पर्यावरण के प्रति गंभीर चिंतन हेतु प्रयास किया।

हम जिस समाज में जन्म लेते हैं, उसमें जीवन और जगत के प्रति भी सचेत रहते हैं। हिमवंत के कवि चन्द्रकुँवर बर्वाल का काव्य सामाजिक चेतना की दृष्टि से अत्यंत महत्व रखता है और यह विशिष्ट तथ्य है कि उत्तरांचल के लोक रूढ़ि लोक विश्वास, लोकोत्सव और लोक परम्पराओं के सुन्दर प्राकृतिक पूर्ण सौंदर्य के साथ विद्यमान हैं। उत्तराखण्ड देवभूमि है। यह शैव भूमि भी है, इसलिए यहां का नारी समाज उमा, गिरिजा, गौरी मां, आदि नामों से रेखांकित होता हुआ यहाँ की नारी में दैवीय शक्तियों का दर्शन है, यही कारण है कि गढ़वाल में आज भी गौरा, पार्वती, यमुना, सरस्वती, गंगा, हिमशिखा, हिमानी, शिवानी, शैलजा, उमा आदि स्त्री बहुलनाम जाते हैं। सांकेतिक रूप में कवि बर्वाल ने शिव एवं पार्वती की संस्तुति करते हुए गढ़वाली पर्वतीय समाज में स्त्री एवं पुरुष के समरस सिद्धान्तों को मान्यता दी है। रैमासी कविता में कवि चन्द्रकुँवर कहते हैं-

“मैंने देखे थे महादेव

बैठे हिमगिरी पर दूर्वा पर

डमरू था मौन खड़ा भू पर

था चमक रहा उज्ज्वल त्रिशूल

सहसा आई गिरजा बोली

मैं लाई नाथ अमूल्य भेंट

हंस कर देख शंकर ने वे राई-मासी के दिव्यफूल

मेरी आंखों में आये वे राई-मासी के दिव्यफूल।”²⁰

पहाड़ में प्रकृति को पूजना एक आम बात है। यहाँ तुलसी, पीपल, आम, देवदारू, वट आदि भारतीय संस्कृति के अनुरूप ही पूजा जाता है। यह सब पर्यावरणीय संकेत हैं।

इस क्रम में उन्होंने गंगा केन्द्रित कर अनेक कविताएं लिखी हैं। उन्होंने गंगा और उसकी घाटियों की नैसर्गिक सौंदर्य का चित्रण किया है, वर्षा काल में पर्वतीय नदियों के बिम्ब उनकी कविता में सर्वत्र विद्यमान हैं। कवि का घर इन्हीं नदियों के आस-पास है। वह कहते हैं-

“मेरे घर से सुन पड़ती गिरवन से आती हंसी स्वच्छ नदियों की सुन पड़ती विपिनों की मर्मर ध्वनियां, सदा दीख पड़ते द्वारों से, खुली खिड़कियों से हिमगिरि के उड़-उड़ आती क्षण-क्षण शीत तुषार हवाएं।”²¹

निष्कर्ष

आज भी यही कहा जाता है कि वन्यजीवों को, पक्षियों को बचाना है। अभ्यारण्यों की संरचना इसी का परिणाम है, किन्तु छायावादी कवि तो प्रकृति में आनन्द के गीत गाता है, झरझरी बहती नदियों, बर्फानी हिमशिखर, पक्षियों के गुंजार के अनेक चित्रण इन कवियों की भांति चन्द्रकुँवर में बहुतायत देखे जाते हैं। इस तरह जल, जंगल, हिमालय नदियों को बचाने की मुहिम हमारे लोक में रही, जिसे हमारे लोककलाकार जनकवियों ने जन-जन तक पहुँचाने का कार्य किया।

संदर्भ- सूची

1. पंत, सुमित्रानंदन-तारापथ, लोकभारती प्रकाशन, 2002 पृ0सं0 192
2. प्रसाद, जयशंकर-कामायनी चिंता सर्ग, हिन्दी पाकेट बुक दिल्ली प्रकाशन वर्ष 1988 पृ0सं0 15
3. कालिदास, कुमार संभव, प्रथम श्लोक, प्रथम सर्ग
4. केदारखण्डी, पृथ्वी सिंह- चन्द्रकुँवर बर्त्वाल स्मृति ग्रन्थ पृ0सं0 90
5. श्रीकंठ, चन्द्रकुँवर काव्य प्रसंग काव्य संहिता, पृ0सं0 -25
6. श्रीकंठ, चन्द्रकुँवर काव्य प्रसंग काव्य संहिता, पृ0सं0 - 18
7. श्रीकंठ, चन्द्रकुँवर काव्य प्रसंग काव्य संहिता, पृ0सं0 -
8. बहुगुणा, संभुप्रसाद, पयस्विनी पृ0सं0 164
9. पंत, सुमित्रानंदन, तारापथ, लोकभारती प्रकाशन 2002, पृ0सं0 55
10. श्रीकंठ, चन्द्रकुँवर काव्य प्रसंग काव्य संहिता, पृ0सं0 -79
11. श्रीकंठ, चन्द्रकुँवर काव्य संहिता, जयश्री प्रकाशन, वर्ष 199 पृ0सं0- 19
12. पहाड़ पोथी, इतने फूल खिले, पृ0 सं0-51
13. चन्द्रकुँवर बर्त्वाल संपूर्ण काव्य साहित्य- पृ0 सं0- 365
14. चन्द्रकुँवर काव्य संहिता-श्रीकंठ- पृ0 114 जयश्रीट्रस्ट, 1999
15. बहुगुणा, संभुप्रसाद, पयस्विनी, आई०टी० कॉलेज लखनऊ 1951
16. सम्पादक - नरेन्द्र पुंडरीक- केदारनाथ सिंह, अनामिका प्रकाशन संस्करण 2011
17. नेगी, नरेन्द्र सिंह, मुठ्ठु बोटिक रख, पहाड़ पोथी प्रकाशन, संस्करण- 2017, पृ0सं0-16०8।
18. बर्त्वाल, योगम्बर सिंह, संपूर्ण काव्य साहित्य, पृ0सं0- 309।
19. जोशी, अनिल, हिन्दुस्तान, 07 मार्च 2019।
20. श्रीकंठ-चन्द्रकुँवर काव्य संहिता, पृ0-18।
21. बर्त्वाल, योगम्बर सिंह, चन्द्रकुँवर बर्त्वाल सम्पूर्ण काव्य साहित्य, चन्द्रकुँवर बर्त्वाल शोध संस्थान, संस्करण 2022 पृ०सं० 454।